International Journal of Enhanced Research in Educational Development (IJERED)
ISSN: 2320-8708, Vol. 14 Issue 3, May-June, 2026

गुलाम वंश की स्थापत्य कला : भारतीय–इस्लामी वास्तुकला का उद्भव और विकास

मासूदा परवीन[1], प्रो. (डॉ.) यशवंत शौर्य[2]

[1]शोधार्थी, इतिहास विभाग, मौलाना आजाद विश्वविद्यालय, बुझावड़, जोधपुर (राज.)
शोध पर्यवेक्षक, निर्देशक आचार्य एवं विभागाध्यक्ष (इतिहास विभाग),सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी संकाय
मौलाना आजाद विश्वविद्यालय, बुझावड़, जोधपुर (राज.)

प्रस्तावना

1206 ईस्वी में कुतुबुद्दीन ऐबक द्वारा दिल्ली सल्तनत के तहत गुलाम वंश (ममलूक वंश) की स्थापना भारत के इतिहास में एक युगांतरकारी घटना थी। इस काल ने न केवल भारत की राजनीतिक संरचना को बदला, बल्कि कला और वास्तुकला के क्षेत्र में भी एक क्रांतिकारी परिवर्तन की नींव रखी। गुलाम वंश के शासकों ने भारत में जिस नई निर्माण शैली को जन्म दिया, उसे मिश्रित स्थापत्य कला या भारतीय–इस्लामी वास्तुकला कहा जाता है।

संकेताक्षरः– कला और वास्तुकला, स्थापत्य, मीनार, मेहराब, गुंबद, स्मारक

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

मोहम्मद गोरी की मृत्यु के बाद उसके तुर्क दास कुतुबुद्दीन ऐबक ने उत्तर भारत में स्वतंत्र मुस्लिम शासन की स्थापना की। इसके बाद इल्तुतमिश और बलबन जैसे शक्तिशाली शासकों ने इस साम्राज्य को स्थिरता प्रदान की। नए शासकों को अपनी धार्मिक और प्रशासनिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए तुरंत मस्जिदों, मकबरों, किलों और महलों की आवश्यकता थी। चूंकि वे मध्य एशिया से अपनी निर्माण परंपराएं साथ लाए थे, इसलिए उन्होंने भारतीय कारीगरों की मदद से नए स्मारकों का निर्माण शुरू किया।
शोध पत्र के उद्देश्य –

1. गुलाम वंश की स्थापत्य कला की मुख्य विशेषताओं का विश्लेषण करना।
2. स्वदेशी (हिंदू–जैन) और विदेशी (इस्लामी) तत्वों के मिश्रण को समझना।
3. कुतुब मीनार और अढ़ाई दिन का झोपड़ा जैसे प्रमुख स्मारकों का विस्तृत अध्ययन करना।
4. तत्कालीन वास्तुकला के सामाजिक और राजनीतिक महत्व को रेखांकित करना।

भारतीय–इस्लामी शैली का उद्भव और तकनीकी संक्रमण – दो संस्कृतियों का मिलन तुर्क शासक अपने साथ मेहराब, गुंबद, और मीनारों की तकनीकी समझ लेकर आए थे। इसके विपरीत, पारंपरिक भारतीय वास्तुकला शतीरी या त्रिशूल शैली पर आधारित थी, जिसमें स्तंभों और शहतीरों का उपयोग करके छतें बनाई जाती थीं।

प्रारंभिक चरण की चुनौतियाँ – प्रारंभिक दौर में मुस्लिम शासकों के पास कुशल मुस्लिम वास्तुकार और समय दोनों की कमी थी। इस समस्या का समाधान उन्होंने दो तरीकों से किया–

1. सामग्रियों का पुनरुपयोग– प्राचीन हिंदू और जैन मंदिरों को तोड़कर उनकी सामग्रियों (स्तंभों, पत्थरों) से प्रारंभिक मस्जिदों का निर्माण किया गया।

2. स्थानीय कारीगरों की सेवाएं– निर्माण कार्य भारतीय कारीगरों द्वारा किया गया, जो मेहराब और गुंबद बनाने की वैज्ञानिक विधि से अपरिचित थे। इसलिए, उन्होंने अपनी पारंपरिक शैली का उपयोग करके मेहराब जैसी आकृतियाँ बनाईं।

मुख्य निर्माण सामग्रियाँ – गुलाम वंश के स्मारकों में मुख्य रूप से स्थानीय स्तर पर उपलब्ध पत्थरों का उपयोग किया गया लाल बलुआ पत्थर धूसर पत्थर सजावट के लिए कहीं–कहीं सफेद संगमरमर का प्रारंभिक उपयोग।

कुतुबुद्दीन ऐबक के काल का स्थापत्य –

कुव्वत–उल–इस्लाम मस्जिद (दिल्ली) – यह दिल्ली सल्तनत की पहली मस्जिद थी, जिसका निर्माण 1192 से 1197 ईस्वी के बीच कुतुबुद्दीन ऐबक द्वारा रायपिथोरा (पृथ्वीराज चौहान के किले) के अवशेषों पर कराया गया था। यह मस्जिद 27 हिंदू मंदिरों और जैन मंदिरों को नष्ट करके प्राप्त की गई सामग्रियों से बनी है। इसके स्तंभों पर आज भी हिंदू धार्मिक प्रतीक जैसे घंटियाँ, कीर्तिमुख और मानव आकृतियाँ धुंधली अवस्था में देखी जा सकती हैं।

मशहूर मकसूरा – ऐबक ने मस्जिद के सामने एक विशाल मेहराबदार पर्दा बनवाया, जिस पर अरबी भाषा में कुरान की आयतें और अत्यंत बारीक बेल–बूटे उकेरे गए हैं। मस्जिद का प्रांगण, प्राचीन मंदिर के स्तंभों का उपयोग, मुख्य प्रार्थना गृह, अरबी सुलेखन से युक्त विशाल मेहराबदार स्क्रीन,

अढ़ाई दिन का झोपड़ा (अजमेर) – 1199 ईस्वी में ऐबक ने अजमेर में इस मस्जिद का निर्माण कराया। इतिहासकारों के अनुसार, यह पहले एक प्रसिद्ध संस्कृत विद्यालय (सरस्वती कंठाभरण विद्यापीठ) था, जिसे विग्रहराज चतुर्थ ने बनवाया था। इसे मात्र ढाई दिनों में मस्जिद का रूप दिया गया (या यहाँ ढाई दिन का उर्स लगता था)। दिल्ली की कुव्वत–उल–इस्लाम मस्जिद की तुलना में यह अधिक विस्तृत और कलात्मक है। इसके मुख्य प्रवेश द्वार पर सात मेहराबों की एक सुंदर स्क्रीन है, जो पीले बलुआ पत्थर से बनी है।

इल्तुतमिश का काल और वास्तुकला का विकास –

कुतुब मीनार का पूर्ण होना यद्यपि कुतुब मीनार की नींव कुतुबुद्दीन ऐबक ने 1199 में सूफी संत ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी की स्मृति में रखी थी, लेकिन वह केवल इसकी पहली मंजिल ही बना सका। इल्तुतमिश ने इसमें तीन और मंजिलें जोड़कर इसे पूरा कराया। यह 72.5 मीटर ऊंची पांच मंजिला इमारत है, जो नीचे से चौड़ी (व्यास 14.3 मीटर) और ऊपर की ओर पतली (व्यास 2.7 मीटर) होती जाती है। इसकी प्रत्येक मंजिल के नीचे सुंदर छज्जे हैं, जिन्हें सहारा देने के लिए छोटे मेहराबदार बनाए गए हैं। पत्थरों पर अरबी सुलेख और ज्यामितीय आकृतियों का बेहतरीन संतुलन है।

सुल्तान गढ़ी का मकबरा (दिल्ली) – 1231 ईस्वी में इल्तुतमिश ने अपने सबसे बड़े बेटे नासिरुद्दीन महमूद की याद में इसका निर्माण कराया। यह भारत का पहला मकबरा माना जाता है, इसलिए इल्तुतमिश को मकबरा निर्माण शैली का जनक कहा जाता है। यह एक किले जैसी संरचना के भीतर स्थित है। इसका मुख्य तहखाना अष्टकोणीय है, जो गुफा जैसी आकृति का है।

इल्तुतमिश का स्वयं का मकबरा कुतुब परिसर में स्थित यह मकबरा स्थापत्य की दृष्टि से बेहद महत्वपूर्ण है। इसकी आंतरिक दीवारें पूरी तरह से कुरान की आयतों और जटिल नक्काशी से ढकी हैं। इसमें पहली बार स्क्रेंच मेहराब का प्रयोग करके चौकोर कमरे को गुंबद के लिए गोलाकार आधार देने का प्रयास किया गया।

बलबन का काल और उत्तर–ममलूक वास्तुकला –

गयासुद्दीन बलबन का मकबरा (दिल्ली) – 1280 के दशक में निर्मित बलबन का मकबरा भारतीय स्थापत्य इतिहास में एक मील का पत्थर है। यह दिल्ली के महरौली पुरातत्व पार्क में स्थित है। वैज्ञानिक मेहराब का उदय इस मकबरे की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें भारत में पहली बार वैज्ञानिक या वास्तविक मेहराब का निर्माण किया गया, जिसमें केंद्र में की–स्टोन का उपयोग किया गया था। आज यह मकबरा काफी जर्जर अवस्था में है, लेकिन इसका ऐतिहासिक और तकनीकी महत्व अद्वितीय है।

बलबन का किला (लाल महल) – बलबन ने दिल्ली में कुश्क–ए–लालि या लाल महल का निर्माण भी कराया था, जो अपनी सुरक्षात्मक दीवारों और बुर्जों के लिए जाना जाता था। यह बलबन की संप्रभुता और राजत्व के सिद्धांत को प्रदर्शित करता था।

कलात्मक विशेषताएँ – गुलाम वंश की स्थापत्य कला की मुख्य विशेषताएँ अरबेस्क शैली मानव या पशु आकृतियों के चित्रण पर इस्लामी प्रतिबंध के कारण, दीवारों को सजाने के लिए ज्यामितीय आकृतियों, फूलों की लताओं और अरबी सुलेखन का व्यापक उपयोग किया गया।

हिंदू कारीगरों के प्रभाव के कारण कमल के फूल, घंटियाँ, और कलश जैसे मांगलिक प्रतीकों का अनजाने में समावेशन हुआ। सुरक्षात्मक और विशाल रूपरू इमारतें दिखने में भारी, मजबूत और भव्य थीं, जो शासकों की सैन्य शक्ति को दर्शाती थीं।

निष्कर्ष

गुलाम वंश की स्थापत्य कला केवल इमारतों का निर्माण नहीं थी, बल्कि यह दो भिन्न सांस्कृतिक और तकनीकी धाराओं का सफल समन्वय थी। प्रारंभिक दौर के विनाश और पुनरुपयोग से आगे बढ़कर, इस काल के अंत तक भारत के कारीगरों ने सच्चे मेहराब और गुंबद बनाने की कला में महारत हासिल कर ली थी।

कुतुब मीनार जैसी कालजयी रचनाएँ और बलबन के मकबरे में हुआ तकनीकी आविष्कार इस बात का प्रमाण हैं कि गुलाम वंश ने आने वाले खिलजी, तुगलक और मुगल काल की भव्य वास्तुकला के लिए एक मजबूत और समृद्ध आधारशिला तैयार की थी।

संदर्भ सूची

1. ब्राउन, पर्सी (1942). इंडियन आर्किटेक्चर (इस्लामिक पीरियड), बॉम्बे डी.बी. तारापोरवाला सन्स।
2. शर्मा, एल.पी. (2015). मध्यकालीन भारत का इतिहास, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल प्रकाशन।
3. हबीब, मोहम्मद और निजामी, के.ए. (1970). दिल्ली सल्तनत का व्यापक इतिहास, पीपल्स पब्लिशिंग हाउस।
4. एएसआई (भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण) की आधिकारिक रिपोर्ट और कुतुब परिसर के पुरालेख।